[Conference-Composition of Colours :December,2014] ISSN- 2350-0530
DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v2.i3SE.2014.3636

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

प्रागैतिहासिक पात्र कला व रंग संयोजन

डॉ अंजलि पाण्डेय्
सहा प्राध्यापक (चित्रकला)
महारानी लक्ष्मीबाई षासकीय कन्या स्नातकोत्तर, स्वषासी महाविद्यालय भोपाल

सारांश–' भूत काल का अध्ययन केवल वर्तमान के माध्यम से ही किया जा सकता है। बीते हुए समय के अध्ययन के लिये वर्तमान वस्तुओं अथवा वर्तमान में विद्यमान संस्मरणों को भूतकाल के अवषेषों के रुप में लेकर उनसे भूतकाल की घटनाओं के बारे में निष्कर्ष निकाला जा सकता है। वे तर्क जिनके आधार पर निष्कर्ष निकाले जाते वे वर्तमान वस्तुओं, घटनाओं तथा सम्बन्धों के अवलोकन पर आधारित होते हैं।''[1]

अनादि काल से मानव अतीत की खोज के लिए प्रयत्नषील रहा है। ज्ञान के विकास के साथ मानव ने अतीत के ज्ञान सम्बधीं साक्ष्य खोजने प्रारम्भ किये और उपयुक्त साक्ष्यों से तथ्य प्रमाणित किये जाने लगे। इतिहासकार को भी अतीत सम्बंधी ज्ञान की तथ्यात्मक प्रस्तुति के लिये विभिन्न साक्ष्यों का प्रयोग करना पड़ता है। पुरातात्विक सामग्री अतीत के इतिहास के वैज्ञानिक एवं तथ्यपूर्ण अध्ययन का प्रमुख आधार बन गई है। पुरातात्विक सामग्री का प्रमुख स्त्रोत मानव की सृजनात्मकता और कलात्मक अभिव्यक्ति है। जिसका उपयोगितावादी स्वरुप मानव द्वारा निर्मित मृद्भांड के रुप में हमारे सामने आता है। मृद्भांडों को, इतिहासकार काल विषेष तथा समाज विषेष के रुप में प्रयोग करते हैं।

आदि काल से ही मानव अपने आन्तरिक गुणों एवं भावों को अभिव्यक्त करने के लिये विभिन्न माध्यमों का प्रयोग करता आ रहा है। चित्रांकन मानव द्वारा प्रयोग किये गये विभिन्न माध्यमों में सबसे अधिक प्रचलित एवं चिरंजीवी हैं। ये चित्र उस काल के मानव के सामाजिक जीवन, रहन–सहन, अर्थ व्यवस्था, धर्म तथा पर्यावरण इत्यादि की जानकारी देते हैं। चित्रांकन के पीछे मानव का क्या उद्देष्य रहा यह जानने के लिये विद्वानों नें विविध व्याख्यायें प्रस्तुत की हैं तथा उनके लिये विविध कारणों को उत्तरदायी माना गया।[2]

आदि काल के मानव द्वारा निर्मित भारतीय षैल चित्रों के अध्येताओं ने प्राकृतिक पदार्थ से विभिन्न रंगों के निर्माण एवं प्रयोग का उल्लेख किया है। उस काल के मानव को इन पदाथों की पूर्ण जानकारी थी तथा उसने इन पदार्थों का प्रयोग षैलचित्रों के निर्माण में भरपूर किया है।

मृद्भांडों की रंग योजना में उनको बनाने वाले कुम्हारों की रंग बनाने और उसे बर्तनों पर चढ़ाने की विषेषता का विषेष प्रभाव पड़ता है। आदिकाल से ही मानव प्रकृति प्रदत्त रंग बनाने के पदार्थो एवं वनस्पतियों की जानकारी रखता रहा है। अफ्रीका के षैल चित्रों में लाल रंग के लिये पषुओं के रक्त का प्रयोग कुषलता से किया गया है। रंगों की जानकारी के साथ–साथ इन रंगों को पीसने और उनका पेस्ट बनाने की विधियों की भी जानकारी उस काल के मानव को थी । षिलाचित्रों में लगाने के लिये पेस्ट बनाने के लिये तरल माध्यम के रुप में जानवर को मारकर उसकी आंतों से निकले सफेद तरल पदार्थ का प्रयोग किया जाता था। कुछ जगहों पर चर्बी के प्रयोग का प्रचलन भी रहा है । मिट्टी में पाये जाने वाले भिन्न तत्वों का प्रयोग भी रंग बनाने के लिये किया जाता है। चूना और खड़िया सफेद रंग के लिये प्रयोग होता है। गेरु का अपना विषेष गेरुआ रंग होता है जो मृद्भांडों में सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है।[3]

आहाड़ में मृद्भांडों पर चित्रण के लिये सफेद रंग के गेरु का प्रयोग किया जाता था जो काले पर सफेद लेप लगाने अथवा काले पर सफेद चित्रण के लिये होता था। लाल रंग के लिये गेरु अथवा हरमिंजी मिट्टी का प्रयोग अधिकांष समाजों में किया जाता रहा है। कायथा उत्खनन से रक्त वर्ण की कुछ गांठें प्राप्त हुई हैं जिनसे लाल रंग का निर्माण किया जाता है[4]

मृद्भांडों की रंग योजना में पर्याप्त भिन्नता पायी जाती है। क्षेत्र विषेष की मिट्टी की रचना और उसमें विद्यमान विभिन्न रासायनिक एवं खनिज तत्वों की मात्रा मिट्टी के रंग को प्रभावित करती है। प्रत्येक क्षेत्र में खनिज तत्वों को प्रतिषत भिन्न होता है। किसी क्षेत्र में अभ्रक अधिक होता है तो दूसरे में चूना, गेरु अथवा बालू अधिक होते है यही तत्व उस क्षेत्र की मिट्टी के रंग रुप को प्रभावित करते हैं। मिट्टी का यही स्वरुप क्षेत्र विषेष के मृद्भांडों को एक विषेष रंग प्रदान करते हैं। जो उस क्षेत्र के पात्रों की पहचान बन जाता है।

INTERNATIONAL JOURNAL of RESEARCH –GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository
Art

मृद्भांडों की रंग योजना के लिये दो प्रकार की प्रक्रिया का प्रचलन रहा है। प्रथम मिट्टी के रंगों के प्रयोग द्वारा तथा द्वितीय पकाने की विषिष्ट विधि द्वारा। मिट्टी के रंगों में गेरिक रंग का प्रयोग सर्वाधिक प्रचलित है और इसलिये गेरिक रंग मृद्भांडों के रंग का पर्याय बन चुका है। मिट्टी के बर्तनों के बनाने की प्रक्रिया में अधिकांष क्षेत्रों की मिट्टी का रंग स्वतः गेरिक हो जाता है इन बर्तनों को और अधिक आकर्षक एवं एक रंग का बनाने के लिये गेरु का आलेप पात्रों को बनाने और सुखाने के बाद उपरी भाग में चढाया जाता है इसके लिये गेरु या हरमिंजी मिट्टी का प्रयोग किया जाता है। सफेद रंग के लिये चूना खड़िया का प्रयोग किया जाता है। लाल रंग के मृद्भांडों पर स्फेद रंग से चित्रांकन सर्वाधिक प्रचलित है और साधारणतया कुम्हार आज भी इनका ही प्रयोग करते है। काले रंग के पात्रों पर सफेद चित्रांकन आहाड़ संस्कृति के पात्रों की अपनी विषेषता रही है जो मालवा क्षेत्र के विभिन्न पुरास्थलों से प्राप्त हुए है। पीली मिट्टी का प्रयोग भी कुछ घड़ों एवं जार इत्यादि आलेप चढाने के लिये किया गया है जिसके प्रमाण मोहनजोदड़ो व हड़प्पा से प्राप्त ठीकरों से होता है। उज्जैन से प्राप्त कुछ ठीकरों पर नारंगी अथवा केसरिया रंग भी चित्रण के लिए प्रयुक्त हुआ है। मृद्भाड़ों के उपर चौथा प्रचलित रंग काला है जो अधिकांषतया दो भिन्न प्रक्रियों द्वारा चढाया जाता रहा है। लाल मृदमांडो पर काले रंग से चित्रण किया गया है आवरा के उत्खनन से प्राप्त लाल पात्रों पर काले रंग का चित्रण है तथा बेसनगर से काले लेपित पात्र प्राप्त हुए है। काले लेप अथवा चित्रण के लिये वनस्पतियों से अथवा लकड़ी के कोयले से बने रंगों का प्रयोग किया जाता रहा है। उपरोक्त प्राथमिक रंगों के अतिरिक्त मिट्टी के इन बर्तनों पर मिश्रित रंगों का प्रयोग भी हुआ है। जो सम्भवतः प्रारम्भिक रंगों के एक के उपर दूसरे रंग के लेप अथवा मिश्रण से बने होंगे। इन रंगों में बैंगनी, गुलाबी, कत्थई, केसरिया धूसर इत्यादि मिले हैं।

मृद्भांडों पर चित्रांकन के लिये कई रंगों का प्रयोग किया जाता रहा है। रंगों के लिये प्रकृति प्रदत्त सभी पदार्थों के प्रयोग का प्रचलन मृद्भांडों के लिये किया जाता था या नहीं इसके प्रमाण इसके प्रमाण उपलब्ध नहीं है; परन्तु विभिन्न प्रकार की मिट्टी जो स्थानीय रुप से उपलब्ध होती है उसका प्रयोग व अवष्य होता रहा है और आज भी उसका प्रयोग जनजीवन में सामान्यतया होता है।

मानव में जन्म से ही अभिव्यक्ति की मूल प्रवृति विद्यमान होती है जो उसे सजाने सवांरने तथा सौंदर्य सम्बन्धी भावों को अभिव्यक्ति के लिये प्रेरित करती हैं। डॉ. जगदीष गुप्त ने इसी सन्दर्भ मे लिखा है कि ''मैं स्वयं इसी निष्कर्ष पर पहुंचा हूं की कि सौन्दर्य की प्रवृति मनुष्य के व्यक्तित्व को वैसा ही आन्तरिक रुप व्यक्त करती है जैसा उन्नयन की प्रवृति से प्रकट होता है। यही कारण है कि मनुष्य के सांस्कृतिक विकास की प्रत्येक ज्ञात अवस्था उसके सौन्दर्यबोध का भी निष्चित परिचय देती है।''[5]

प्रकृति में उपलब्ध विभिन्न रंगों के प्रति मानव मन का रूझान स्वभाविक है और इन्ही रंगों को अपनी कलात्मक अभिरूचि में प्रदर्षित करना मानव मन का सदैव रूचिकर विषय रहा है ,रंगो के संसार से मानव मन का जुडाव युगों युगों तक बना रहेगा

संदर्भ सूची

1– स्पाउल्डिग ए. सी.; 1968; एक्सप्लेनेषन इन आर्क्योलोजी इन न्यू पर्सपक्टिव इन आर्क्योलोजी, एस विनफोर्ड एवं एल विनफोर्ड , एल्डिव, षिकागो पृ–37
2– गुप्त जगदीष; 1967, प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला, नेष्नल बुक, दिल्ली, पृ– 58–85
3– काम्बोज भगवती प्रसाद; 1988; प्राचीन यूरोपीय कला, रतन प्रकाषन मंदिर, आगरा, पृ–8
4– धवलीकर एम.के. ; 1970 कायथा; ए न्यू चालकोलिथिक कल्चर इन्डिका वॉल्यूम–7,1970 पृ– 72
5– गुप्त जगदीष ; वही पृ– 566